# 'अवनद्ध वाद्यो में तबला वाद्य का स्थान'

**मार्गदर्शक :**
**प्रो.डॉ.अजय अष्टपुत्रे**
**दि महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय**
**वडोदरा (गुजरात)**

**दिपक प्रकाश दाभाडे**
**शोधार्थी: तबला विभाग**
**दि महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय**
**वडोदरा (गुजरात)**

---

**सार–संक्षेप**

अवनद्ध वाद्य याने जिस वाद्य के मुख पर चमढे की जगह खाल का प्रयोग किया जाता है, जो वाद्य खाल से मढा हुआ रहता है इस प्रकार के वाद्य को बजाने के लिए हाथो या किसी लकडी से आघात करके स्वर उत्पन किया जाता है उस वाद्य को अवनद्ध वाद्य कहते हैं। अवनद्ध वाद्य के श्रेणी में तबला, पखावज, ढोल, ढोलक, ताशा, सम्बल, खंजिरा, मुरज, नाल, नक्कारा आदि वाद्यों का समावेश होता है। इन अवनद्ध वाद्यो का बाज और बनावट अलग प्रकार की है। अवनद्ध वाद्यो में कई सारे ऐसे वाद्य है जो केवल लोकसंगीत या धार्मिक उत्सवो में संगत करने के लिए इन वाद्यों का प्रयोग किया जाता है। लेकिन तबला यह साज केवल साथसंगत ही नही बल्कि स्वतंत्र वादन के रूप में विकसित हुआ और दुनियाभर में काफी लोकप्रिय भी हो चूका है। आज तबले के जैसी लोकप्रियता किसी अन्य अवनद्ध वाद्य को प्राप्त हुई नही है। इसी लोकप्रियता के कारण कोई भी ऐसी संगीत मैफिल नही जिसमें तबला वाद्य की साथसंगत या स्वतंत्र वादन के लिए प्रयोग न होता हो।

प्रस्तुत शोधपत्र 'अवनद्ध वाद्यो में तबला वाद्य का स्थान' इसमें अवनद्ध वाद्यों का निर्माण किस प्रकार हुआ? प्राचीन एवं कुछ प्रचलित अवनद्ध वाद्यों की तुलना में तबला यह वाद्य बाज और बनावट की दृष्ठिकोंन से किस प्रकार अलग रहा? तबला यह साज दुनियाभर में इतनी लोकप्रियता पाने में अन्य अवनद्ध वाद्यों की तुलना में किस प्रकार सफल रहा? इन तथ्यों को प्रस्तुत शोधपत्र द्वारा शोधार्थी ने उजागर करने का प्रयास किया है। प्रस्तुत शोध–पत्र लिखने के लिए माध्यमिक स्त्रोतों के अन्तर्गत गुरूजन तथा अनेक विद्वान तबला वादकों के साक्षात्कार तथा विविध ग्रंथो का आधार लिया गया है।

**( मुख्य शब्द – अवनद्ध, तबला, वाद्य, बाज, वादन, साथसंगत )**

**शोधपत्र** –

**अवनद्ध वाद्य का निर्माण** –

जो वाद्य भीतर से खोंखले होते है और चमडे से मढे हुए होते है, जिसमें हाथ या किसी लकडी से आघात करके नाद उत्पन्न किया जाता है उस वाद्य को अवनद्ध वाद्य कहा जाता है। वाद्य शब्द का अर्थ है 'बाजा' याने जिसपर आघात करके भिन्न–भिन्न ध्वनियों का निर्माण किया जाता है। तालवाद्यों में लय और स्वर दोनो महत्वपूर्ण होते है। "अवनद्ध वाद्य को वितत भी कहा गया है। तानसेन के पूर्व–रचित संगीत चूडामणि में अवश्य अवनद्ध के स्थान पर वितत शब्द का प्रयोग मिलता है।"[१] अवनद्ध वाद्यों के श्रेणी में से कुछ वाद्य एक हाथ से बजाये जाते है जैसे खंजरी, हुडुक तो कुछ वाद्यों को लकडी के सहारे बजाया जाता है जैसे नक्कारा, ढोल, ताशा, सम्बल आदि। कुछ अवनद्ध वाद्यों को दोनो हथेलियों और उंगलीयो द्वारा बजाया जाता है जिसमें तबला, पखावज, नाल, खोल आदि वाद्यों का समावेश होता है। डॉ. हेमा दानी 'अवनद्ध वाद्य का प्राचीन प्राकृतिक रूप व महत्व' में अवनद्ध वाद्य के निर्माण के बारे में लिखती है कि "मरे हुए जानवर की खाल को सूखने के लिए पेड की डाल पर या कीडे द्वारा खोखले किए गये पेड के तने के टुकड़े पर डाल दिया गया होगा। सुखने पर हवा से हिलकर पेड की टहनी जब उस सुखी खाल पर आघात करने लगी, तो उससे उसे विचित्र ध्वनि सुनाई दी। उस मानव ने उस खाल को जमीन पर फैलाकर आघात किया, तो उसे ध्वनी नहीं सुनाई पडी। उसने अनुभव किया की खाल की पिछलीओर कोई वस्तु यदि खाल से सटी हुई नहीं हो, तो आवाज आती है। उसने भूमि में गढा खोदकर खाल उसके उपर खींचकर तान दी, आघात किया और ध्वनी आने लगी। इस प्रकार भूमि दुन्दुभि वाद्य का जन्म हुआ तथा भूमि दुन्दुभि के प्रारम्भिक रूप ने ही आगे चलकर चर्म से मढे हुए अर्ध्दविकसित वाद्य को जन्म दिया।"[२]

प्राचीन काल से लेकर आधुनिक काल तक के अवनद्ध वाद्यों में विभिन्न परिवर्तन हुए है। अवनद्ध वाद्यो का उपयोग प्राचीन काल से ही लय–ताल वाद्य के रूप में होता आ रहा है लेकिन आधुनिक काल में पखावज और तबला जैसे वाद्यो का विकास स्वर शास्त्र की तरह हुआ जिस कारण तबला और पखावज जैसे वाद्य अन्य अवनद्ध वाद्यों से बाज और बनावट तथा वादन साहित्य की वजह से काफी आगे विकसित हुआ।

आगे कुछ प्राचीन एवं वर्तमानकाल के कुछ प्रचलित अवनद्ध वाद्यों की जानकारी को प्रस्तुत किया गया है ।

**त्रिपुष्कर वाद्य –**

त्रिपुष्कर वाद्यो में उर्ध्वक, आलिंग्य और अंकिक इन तीन वाद्यों का समावेश होता है। ये तीनो वाद्य भीतर से खोखले होते थे और इनके मुख को चमढे द्वारा मढा जाता था तथा इन वाद्यों को आघात करके बजाया जाता था। त्रिपुष्कर वाद्यों को बजाने के लिए हाथो या लकडी का उपयोग किया जाता था। उर्ध्वक और आलिंग्य ये दो भाग खडे रखकर बजाये जाते थे और अंकिक वाद्य लिटाकर बजाते थे। त्रिपुष्कर वाद्यो में कुछ वाद्यो को निश्चित स्वर में मिलाने का प्रावधान था। "कुछ संगीत तज्ञ मृदंग, मर्दल व मुरज इन वाद्यों को 'त्रिपुष्कर' भी कहते है।"[३]

### त्रिपुष्कर वाद्य का पहिला भाग: उर्ध्वक

उर्ध्वक इस वाद्य का आकार 'जौ' के आकार का होता है और इसके आकार पर इसकी बनावट की गई है। यह एकमुखी अवनद्ध वाद्य है और इसका निर्माण भी मिट्टी से किया गया था। यह वाद्य बिच में से खोखला होता था। इस वाद्य को सीधा खडा रखकर बजाया जाता था और इसके उपर साफ किये हुये जानवर की खाल को चढाया जाता था। इसकी लंबाई ४ बिलात तथा मुख का व्यास १४ अंगुल रखा जाता था। इसका मुख भी चमडे से मढा हुआ होता था।

### त्रिपुष्कर वाद्य का दुसरा भाग : आलिंग्य

इस वाद्य को गोपुच्छ भी कहा जाता है। इसकी बनावट गाय के पूंछ के आकार जैसी होती थी। यह वाद्य भी मिट्टी से बनाया जाता था। इस वाद्य को उर्ध्वक की तरह सीधा खडा रखकर इसका वादन किया जाता था। इसकी ऊँचाई ३ बिलात एवं मुख का व्यास ८ अंगुल तक होता था।

### त्रिपुष्कर वाद्य का तिसरा भाग : अंकिक

त्रिपुष्कर वाद्य को हरीतकी भी कहा जाता है। हरीतकी एक प्रकार का आयुर्वेदिक फल होता है। वर्तमान में अंकिक वाद्य को पखावज का सुधारीत रूप कहा जाता है। 'अंकिक' वाद्य की लंबाई साडेतीन बिलात होती थी और मुख का व्यास बारा अंगुल इतना होता था। इस वाद्य को डोरी द्वारा कस दिया जाता था। अंकिक मिटटी से बनाया हुआ वाद्य है। इसकी पुडी पर गाय के घी के साथ तील पीसकर उसका लपेन लगाया जाता था।

### दुन्दुभी –

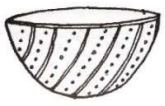
दुन्दुभी

अवनद्ध वाद्यो में 'दुन्दुभि' अतिप्राचीन वाद्य है। भरतकृत 'नाटयशास्त्र' इस ग्रंथ में ३३ वे अध्याय में इसका वर्णन मिलता है। संगीत रत्नाकर ग्रंथ में कहा गया है कि दुन्दुभी वाद्य कास्य धातु से बनाया जाता था। इसके मुख को चमढे की

बद्धियाँ लगी होती थी, जिन्हे कस दिया जाता था। चमडे से निर्मित कोनसे ही 'दुन्दुभि' का वादन किया जाता था। इस वाद्य को लकडी की सहायता से पीट—पीटकर बजाया जाता था।

**नक्कारा —**

नक्कारा मुल अरबी शब्द है। इस वाद्य को अवनद्ध वाद्यो में से एक प्रमुख वाद्य माना जाता है। इसका नाद गहरा, गम्भीर स्वरूप का होता हैं। ये आकार में काफी बडे हाते हैं, इसे बजाने के लिए दो डंडीयों की सहायता से दोनो हाथो से बजाया जाता है। कई ग्रंथों में उल्लेख मिलता है की नक्कारे का उपयोग युद्धभूमी में सैनिकों का हौसला बढाने के लिए तथा दुश्मनों को चेतावनी देने के लिए इसका प्रयोग किया जाता था। संगीत रत्नाकर इस ग्रंथ में नक्कारे को 'दुन्दुभी' कहा गया है। नक्कारे विशेषता पीतल और तांबे के बनाये हुए होते है इसपर भैंस की मोटी चमडी का उपयोग पुडी को मढने के लिये किया जाता है।[४]

**ताशा —**

ताशा

ताशा चपटा व कटोरनुमा वाद्य होता हैं, जो लोहे अथवा तांबे से बनाया जाता हैं। इसका व्यास लगभग २४ सेमी होता हैं। इसके मुखपर बकरे की खाल मढी जाती हैं। ताशा का प्रयोग पहले के समय में घटीका (समय) याद रखने के लिए किया जाता था। इस वाद्य को शादी के समय तथा दंगल या कुश्ती जैसी प्रतियोगिता में भी बजाया जाता है। इस वाद्य का डोरी से बांधकर, गले में लटकाकर वादन होता है।

**सम्बल—**

सम्बल महाराष्ट्र का अत्यंत लोकप्रिय वाद्य है। इस वाद्य का प्रयोग लोकसंगीत में व लोकनृत्य में किया जाता है। गोंधळ, जागरण आदि धार्मिक कार्यक्रमों में भी इसे बजाया जाता है। सम्बल के दो भाग होते है, इसे बजाने के लिए लकडीयोंका उपयोग किया जाता है और लकडी का आकार अंग्रेजी के 's' अक्षर कि तरह होता है। सम्बळ के उपर के दोनो भाग चमडे के बनाये हुये होते है।

**डफ —**

इस वाद्य का प्रयोग विशेषता लोकसंगीत में होता है। इस वाद्य को एक हाथ से पकडकर दूसरी हाथ की उंगलीयों से सहलाते हुए बजाया जाता है। डफ का उपयोग विशेषता पोवाडा इस

लोकसंगीत के साथ किया जाता है। आमतौरपे डफ १० इंच से २ फूट, ६ इंच तक का होता हैं। डफ के पतली लकडी के घेरे पर ६ अंगुल व्यास होता है, पतले चमढे द्वारा इसे मढा जाता है।

**ढोल** –

ढोल का प्रयोग उत्तर भारत में काफी होता है। यह एक पुराना तालवाद्य है, इस वाद्य को विशेषता नृत्य के साथ बजाया जाता है तथा ये लोक संगीत या भक्ति संगीत को ताल देने के काम आते है। ढोल आम, शीशम, नीम, सागौन की लकडी से बनाया जाता है। इसके दोनों मुखों पर बकरे की खाल डोरियों से कसी रहती है। प्राचीन काल में ढोल का प्रयोग पूजा, प्रार्थना और नृत्य गान में किया जाता था तथा दुश्मनों पर प्रहार करने, खुंखार जानवरों को भगाने, समय व चेतावनी देने के साधन के रूप में भी इसका प्रयोग किया जाता था।

**पखावज** –

उत्तर भारत में पखावज को मृदंग भी कहा जाता है। पखावज इस वाद्य का विकास १८ वी सदी के बाद दिखाई देता है। पखावज की रचना त्रिपुष्कर वाद्य अंकिक के समान हैं। पखावज शीशम, बीज, आम आदि वृक्षों की लकडी से बनता हैं। यह मृदंग के समान ही बीच में से खोखला होता हैं। पखावज, में उत्पन्न होनेवाली ध्वनि गंभीर होती है। पखावज के बनावट के कारण ही उसके बायें मुखपर ढोलक समान घुमकदार ध्वनी निकालना सम्भव नहीं होता है। अत: पखावज का वादन खुले बोलों से ही अधिक होता है। पखावज के दायाँ भागपर स्याही का प्रयोग किया गया जिसकी वजह से ध्वनि साहित्य अन्य अवनद्ध वाद्यों की तुलना में जादा रहा है। धा, ता, धिं, धीट, तीट, किट, तिरकिट आदि प्रकार के खुले बोल पखावज पर बजाये जाते है।

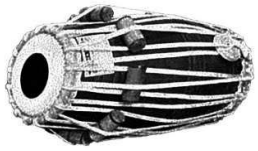

**तबला** –

तबला यह साज 'तबला' व 'डग्गा' इन दो भागो से बना हुआ है। तबला वाद्य का प्रयोग साथसंगत और स्वतंत्र वादन दोनो के लिए किया जाता है। तबले के दाहीने भाग को 'दायाँ' कहते हैं और बायें भाग को 'डग्गा' या 'बायाँ' कहते है। इन दोनो भागों को हाथ से बजाया जाता है। तबले से तारध्वनि और डग्गे से खरज ध्वनि निकाला जाता है। तबला खैर, शिसव, बबूल, चिंच आदि लकडी से बनाया जाता है। तबले का खोड, लकडी का होता है और इसकी ऊँचाई ९ इंच से लेकर ११ इंच तक होती है। तबले के मुख पर बकरी की खाल से तयार की गई पूडी होती है।

पूडी के बीच में गोलाकार जगह पर लौह चूर्ण से तैयार किया हुआ मसाले का प्रयोग लेपन के लिए किया जाता है, जिसको स्याही कहते हैं। तबले को विशिष्ट स्वर में मिलाया जाता है। अन्य अवनद्ध वाद्यों की तुलना में पखावज के बाद तबला यह साज है जो तानपुरे के सुर के साथ काफी एकरूप होता है। तबले से निकलने वाला यह स्वर तबले के तने पे जो चमडा चढाया है उसके नाप व तबले पर लगाई गई स्याही इसपर निर्भर होता है। इस प्रकार तार षड्ज से लेकर मंद्र षड्ज तक सभी स्वरों को तबले पर निकालना आसान हुआ है जो तबला और पखावज के अलावा अन्य अवनद्ध वाद्यों पर संभव नही हो पाया है।

**अवनद्ध वाद्यो में तबले का स्थान** –

अवनद्ध वाद्यो का प्रयोग केवल लोकसंगीत, धार्मिक उत्सवो में साथसंगत करने के लिए अधिकतर होता आ रहा है। तबला या पखावज जैसे गिने चुने वाद्यों को छोडकर अन्य वाद्यों पर अधिकतर स्वतंत्र वादन दिखाई नही देता है। बहुत से अवनद्ध वाद्य ऐसे है कि जिने केवल लकडी के सहारे बजाया जाता है। कुछ अवनद्ध ऐसे है जिनपर स्याही का प्रयोग नहीं होता है। यही वजह है कि वर्तमान काल में तबला वाद्य अन्य अवनद्ध वाद्यो की तुलना में सर्वोत्तम स्थान पर है क्योंकि इसकी वादन शैली बहुत विकसित हो चूकी है। इस वाद्य का निर्माण शुरूआती के समय ख्याल गायन के साथ संगत करने के लिए हुआ, लेकिन कुछ ऐसे विद्वान तबलावादक एवं रचियेता हुए जिन्होंने तबला वाद्य को साथसंगत के साथ ही इस वाद्य पर बजाने लायक अनेक अमुल्य रचनाओं का निर्माण किया और तबला वाद्य को स्वतंत्र रूप में नई दिशा प्रदान की। इन रचनाकारों ने तबले पर स्वतंत्र वादन के लिए विस्तारक्षम रचना और पूर्वसंकल्पित रचनाओं का निर्माण किया। "पखावज को तबले का पितासाज कहा जाता है, लेकिन पखावज पर पूर्वसंकल्पित रचना याने गत, चक्रदार, टुकडे, परण जैसी रचनाओं का वादन होता है और विस्तारक्षम रचनाओं में प्राय: रेला बजाया जाता है। तबला वाद्य ने पखावज से अलग पूर्वसंकल्पित रचनाओं के साथ ही विस्तारक्षम रचना का भी प्रयोग स्वतंत्र तबला वादन में किया जिनमें पेशकार, कायदा, रेला तथा पूर्वसंकल्पित रचनाओं में गत, चक्रदार, टुकडे, परन आदि रचनाओं द्वारा तबला साज अन्य चर्मवाद्यों से अलग एवं परिपूर्ण वाद्य के रूप में समृद्ध हुआ।"[५] विस्तारक्षम और पूर्वसंकल्पित रचनाओं की बदोलत तबले पर अन्य अवनद्ध वाद्यों से अधिक रचनाओं का विशाल भंडार पाया जाता है और यह केवल अन्य अवनद्ध वाद्यों की तुलना में तबला इस वाद्य पर ही मुमकिन हुआ।

कुछ अवनद्ध वाद्यों पर सिर्फ दायें भागपर स्याही का प्रयोग होता है उदा. पखावज अथवा मृदंग । लेकिन तबला वाद्य के दायें तथा बायें दोन्हो भागों पर स्याही का प्रयोग किया जाता है

जिसकी वजह से तार और खरज ध्वनि निकालना संभव हुआ। बहुत से ऐसे अवनद्ध वाद्य है जिनपर स्याही का प्रयोग नही दिखाई देता है इस वजह से इन्हे लकडी के सहारे बजाया जाता है। तबले के दायाँ और बायाँ दोनो भागो पर स्याही का प्रयोग होने के कारण बजाने के लिए हाथो की उंगलीयों का स्वतंत्र रूप से प्रयोग किया गया जिसकी वजह से तबला अन्य अवनद्ध वाद्यों की तुलना में द्रुत लय में बजाने के लिए काफी मददगार साबित हुआ। तबले के बायाँ भाग याने डग्गे पर स्याही का प्रयोग होने के कारण इसमें घुमक, मिंड इनको निकालना संभव हुआ। शुरूआती के समय तबला मृदंग की तरह खुले हाथों से बजाया जाता था, लेकिन डग्गे पर स्याही का प्रयोग करने के पश्चात तबले पर खुले और बंद दोनों प्रकार के बोलों को निकालना आसान हुआ और यह केवल अन्य अवनद्ध वाद्यो में तबला इस वाद्य पर ही मुमकिन हुआ जिसकरण तबला वाद्य अन्य वाद्यों की तुलना में अपनी एक अलग पहचान बनाने में कामयाब हो गया।

**निष्कर्ष** –

आज तबला वादन के वादन सामग्री में रचनाओं का विशाल भण्डार पाया जाता है इसके लिए अनेक तालवाद्यों से बोलों का चयन किया गया है जैसे ढोलक, नक्कारे से लग्गी, मृदंग से परन, रेला तथा नृत्य से परन, मुखडा, गत आदि। आधुनिक काल में तबले की पुडी का तनाव बरकरार रखने के लिए बद्धियों द्वारा लकडी के गठठे को लगाया जाता है। हाथोडी से प्रहार करके तबले को खरज में मनचाहे सुर में मिला सकते हैं। तबले के जैसे किसी भी स्वर में स्थापित करने की सुविधा अन्य किसी भी अवनद्ध वाद्य में नहीं पायी जाती है। इस प्रकार वर्तमान समय में तबला साहित्य किसी भी अवनद्ध वाद्य की साहित्य से अधिक सौंदर्यपूर्ण एवं विशाल हो गया है। अवनद्ध वाद्यों में सुर को कम–जादा किया जा सकता है, कुछ प्रमाण में उसे दूसरे सुर के साथ भी मिलाया जाता हैं लेकिन, तबला एकलौता ऐसा साज, है जो तानपुरे के सुर के साथ काफी एकरूप होता है, तानपुरा के सुर के साथ बखुबी मिलता हैं और यह सिर्फ अन्य अवनद्ध वाद्य की तुलना में तबला या मृदंग जैसे वाद्य पर ही संभव हुआ हैं। तबला वाद्य सुरीला होने की वजह से ही इसका उपयोग अन्य वाद्यो की तुलना में साथसंगत के लिए अधिक होता आ रहा हैं।

आधुनिक काल में जो भी अवनद्ध वाद्य है उनपर विस्तारक्षम रचनाओं का वादन नही किया जाता हैं लेकिन अन्य अवनद्ध वाद्यो की तुलना में तबले की बाज और बनावट बिल्कुल अलग है इसी कारण इसपर विस्तारक्षम रचनाओं को बजाना मुमकीन हुआ। विस्तारक्षम रचनाओं का वादन खाली–भरी द्वारा होता है लेकिन अन्य किसी भी अवनद्ध वाद्योंपर खाली–भरी द्वारा वादन दिखाई नहीं देता हैं। आज अवनद्ध वाद्यों में तबला वाद्य ने अग्रस्थान प्राप्त कर लिया हैं।

गायन के साथ साथ—संगत में तबले के सुर को षड्ज, मध्यम, पंचम, निषाद जैसे किसी भी सुर में मिला सकते हैं। तबले में बजनेवाली विस्तारक्षम रचना और पूर्व संकल्पित रचनाओं के बदौलत अनेक वादन शैलियों का निर्माण हुआ जो बाज या घराने के नाम से जाने जाते हैं। आज के समय में बाज और घरणों के कारण तबला वाद्य इतना विकसित हो चुका है कि, अन्य अवनद्ध वाद्यों की तुलना में सबसे लोकप्रिय वाद्य के रूप में स्थान बनाने में यह वाद्य सफल रहा है।

---

**संदर्भ ग्रंथसूची —**


१ विनीता, श्रीवास्तव "भारतीय संगीत में अवनद्ध वाद्यों की ऐतिहासिक पृष्टभूमि का विश्लेषनात्मक अध्ययन" रिसर्च पेपर पृ. ३३

२ दानी, हेमा "अवनद्ध वाद्य का प्राचीन प्राकृतिक रूप व महत्व"
जरनल ISSN:०९७६-३२८७ पृ. ६१

३ मुलगावंकर, अरविन्द "तबला"
पॉपुलर प्रकाशन, मुंबई पृ.१४

४ दंडगे, अमोद, "पदव्युत्तर तबला",
भैरव प्रकाशन, पृ.२३०

५ साक्षात्कार, दंडगे, आमोद
स्थान: कलांगन, मडगांव, गोवा २० अक्तूबर २०१८


*****